52. खेमाथेरीगाथा

खेमा सागल (स्यालकोट) की राज-कन्या थी। वह बहुत ही सुन्दर और स्वर्णवर्णा थी। उसका मगधराज बिम्बिसार से विवाह हुआ था। मगधराज बिम्बिसार भगवान् बुद्ध के अनन्य उपासक थे। भगवान् बुद्ध के प्रति उसके मन में अपार श्रद्धा थी और उन्होंने जिस सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक और वैचारिक क्रान्ति को जन्म दिया था, उससे वे अत्यधिक प्रभावित थे। शास्ता एक दिन वेणुवन आए। सारा राज-परिवार उनके दर्शन के लिए गया। किन्तु खेमा नहीं गई, क्योंकि वह जानती थी कि भगवान् बुद्ध किसी भी प्रकार के गर्व की तुच्छता और विपरिणामता दिखाते हैं, लेकिन महाराजा किसी प्रकार उद्यान की शोभा दिखाने के बहाने से उसे वहाँ ले गए। अकस्मात् भगवान् बुद्ध के दर्शन भी वहाँ उसे हो गए।

शास्ता ने उसे किसी भी प्रकार के गर्व की निस्सारता दिखाने के लिए उपदेश दिया और एक कथा सुनाई। उसे सुन कर खेमा ने अपने मन में सोचा, "इस प्रकार की अप्सरायें ओर

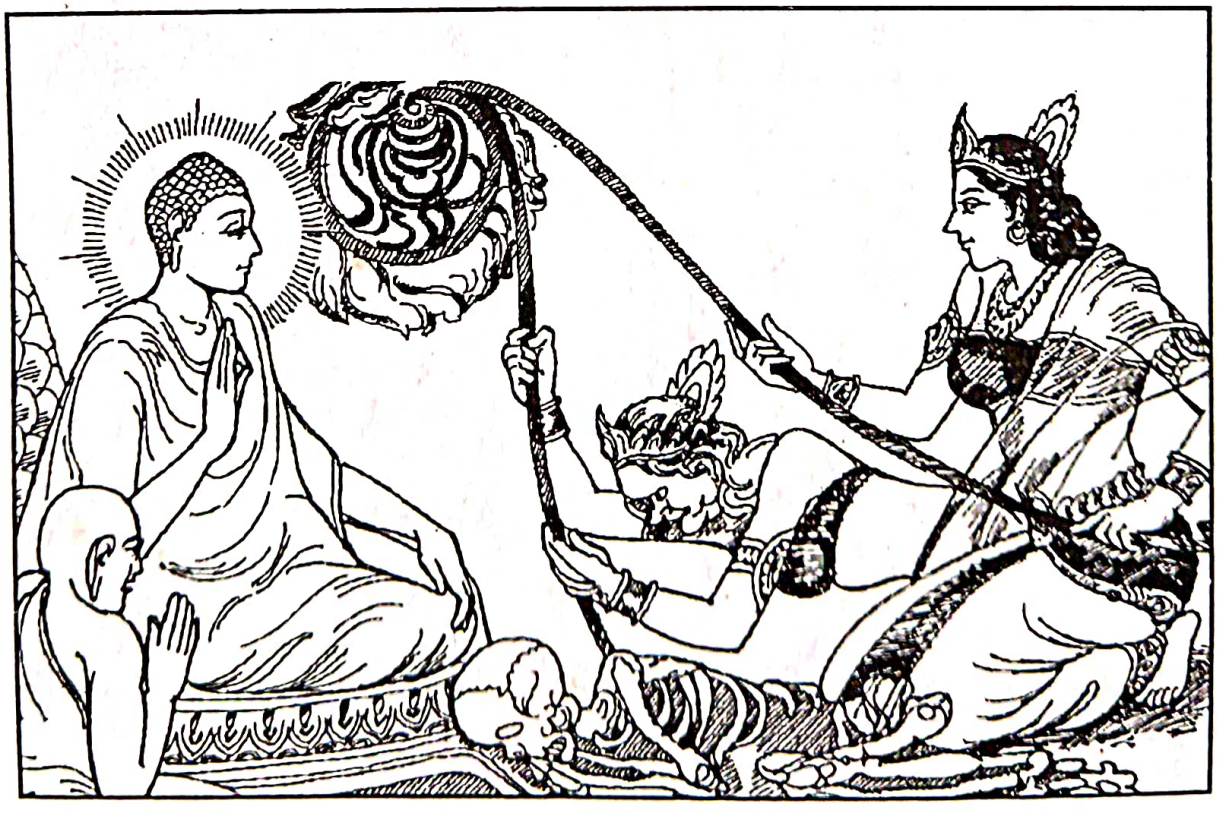

देव-रमणियाँ भगवान् को घेरे रहती हैं, मैं तो इनकी दासी होने के भी योग्य नहीं। मेरे रूप-अभिमान ने तो मुझे नष्ट कर दिया।'' वह उस अप्सरा की रूप-सम्पदा के बारे में सोती रही। खेमा सोचने लगी, ''हाय ! गर्व का क्या यही परिणाम है ? मेरा भी क्या यही परिणाम होगा।'' भगवान् ने ठीक समय जान कर उसे उपदेश दिया।

उपदेश के अनन्तर ही खेमा को ज्ञान प्राप्ति हो गई। उसमें भिक्खुणी बनने की इच्छा जागृत हुई। बाद में प्रव्रजित होकर खेमा भगवान् बुद्ध की सबसे बड़ी प्रज्ञावती भिक्खुणी हुई। एक दिन खेमा वृक्ष के नीचे आसन मारे ध्यान में लीन थी, जबकि एक युवा पुरुष ने मार के रूप में आकर उसे लुभाने की चेष्टा की। उन दोनों का संवाद और किस प्रकार खेमा ने अपनी अद्‌भुत ज्ञान-साधना से उस पर विजय प्राप्त की, खेमा धम्मगीत इन पंक्तियों में हमारे लिए छोड़ गई है—

दहरा त्वं रूपवती, अहम्पि दहरो युवा।
पञ्चङ्गिकेन तुरियेन, एहि खेमे रमामसे॥ 139 ॥

अर्थ— *(एक युवक कहता है—) हे खेमा ! तू रूपवती युवती है, मैं भी रूपवान युवक हूँ। आ खेमा ! पाँच अंगों से युक्त तूर्य ध्वनि (वाद्य-संगीत)* के साथ हम दोनों मिल कर यहाँ विषय-सुख का आनन्द लें।*

इमिना पूतिकायेन, आतुरेन पभङ्गुना।
अट्टियामि हरायामि, कामतण्हा समूहता॥ 140 ॥

अर्थ— *(भिक्खुणी खेमा कहती है—) इस गन्दे, घृणित, व्याधि के घर, क्षणभंगुर शरीर से विषय-सुख का अनुभव करने में मुझे घृणा आती है। मैं लज्जा अनुभव करती हूँ। मैंने काम-तृष्णा की*

* वाद्य-संगीत के पाँच अंग हैं—आतत, वितत, आतत-वितत, घन और शुषिर।

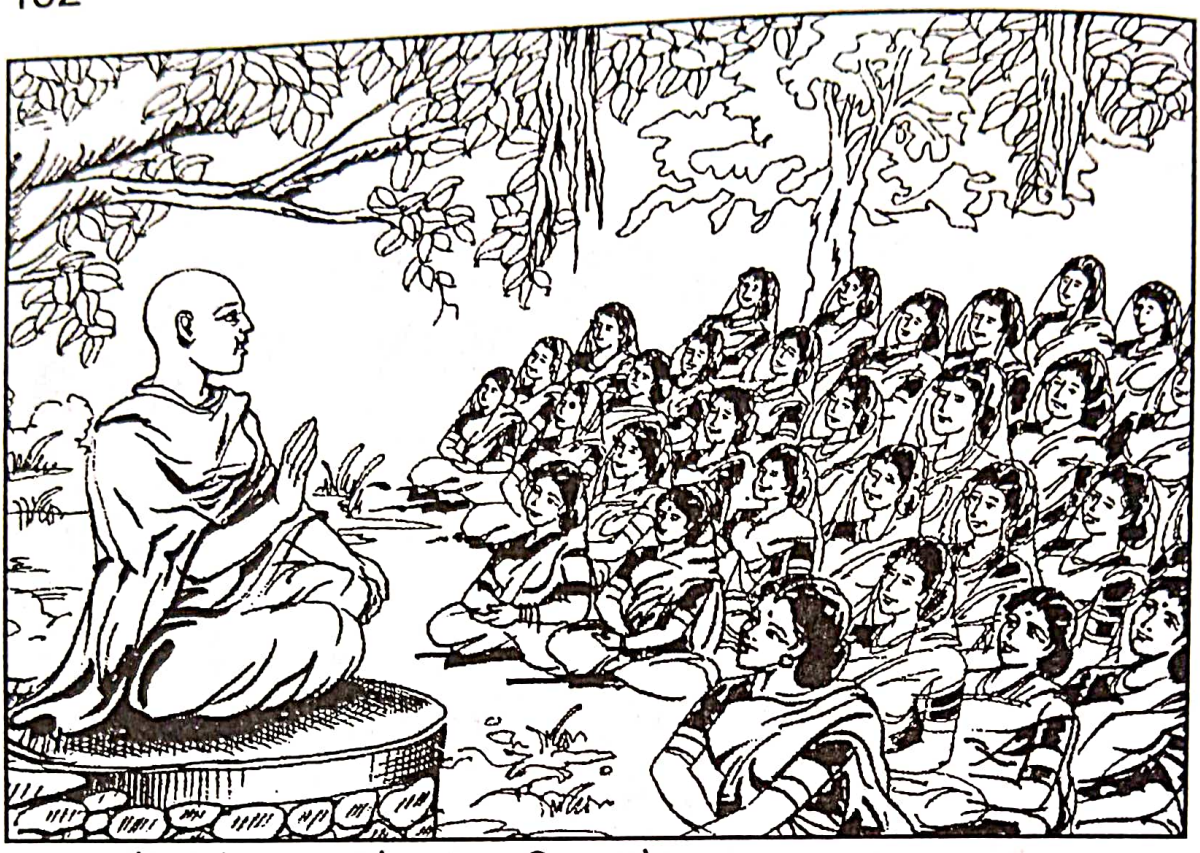

जड़ को पूरी तरह से काट दिया है।

सत्तिसूलूपमा कामा, खन्धासं अधिकुट्टना।
यं 'त्वं कामरतिं' ब्रूसि, 'अरती' दानि सा मम॥ 141 ॥

अर्थ— *देख ! यह काम-तृष्णा नुकीले भाले के समान आहत करने वाली है। ये स्कन्ध-समूह तेज धार वाली छुरी के समान काटने वाले हैं। जिसे तू भोग का आनन्द कहता है, वही मेरे लिए घृणा को उत्पन्न करने वाली चीज है।*

सब्बत्थ विहता नन्दी, तमोखन्धो पदालितो।
एवं जानाहि पापिम, निहतो त्वमसि अन्तक॥ 142 ॥

अर्थ— *मैंने सब प्रकार की भोग-तृष्णा का विनाश कर दिया है, अंधकार-पुँज को हटा दिया है। पापी मार ! प्राणियों का अन्त करने वाले ! समझ ले, आज तू भी पराजित कर दिया गया ही। मैंने तेरा ही अन्त कर दिया है।*

नक्खत्तानि नमस्सन्ता, अग्गिं परिचरं वने।
यथाभुच्चमजानन्ता, बाला सुद्धिममञ्ञथ॥ 143 ॥

अर्थ— *सत्य को यथार्थ रूप से जानते हुए भी मूर्ख लोग ग्रहों-नक्षत्रों को नमस्कार करते हैं, वनों में अग्नि-पूजा करते हैं, और इस प्रकार शुद्धि-प्राप्ति की आशा करते हैं।*

अहञ्च खो नमस्सन्ती, सम्बुद्धं पुरिसुत्तमं।
पमुत्ता सब्बदुक्खेहि, सत्थुसासनकारिका''ति॥ 144 ॥

अर्थ— *मैंने सर्वोत्तम पुरुष भगवान् सम्यकसम्बुद्ध को नमन किया है और उस शास्ता के शासन को पूरा कर मैं अब सब दुक्खों से पूरी तरह विमुक्त हो गई हूँ।*